‘सभ्य समाज’ ने गौवंश को अवारा मान लिया ताकि कसाई का कारोबार चलता रहे

गांव में एक समय हमारे घर कई गाय और भैंस होती थीं। बैल भी। नियमित। पर एक गाय थी जिसे हमारे बाबा ने जाने किस कारण से उसे दो-तीन बार बेचा। पर वह हर बार पगहा तुड़ा कर किसी रात हमारे घर भाग कर आ जाती थी। एक बार तो कोई पचास किलोमीटर दूर बेची। हफ्ते भर में वह फिर आ गई। बाबा सुबह उठे तो दरवाजे पर रोती हुई खड़ी मिली। बाबा उसे पकड़ कर रोने लगे। कहने लगे , अब तोंहके हम कब्बो , कहीं नाहीं भेजब। एक बैल भी ऐसा निकला। वह भी भाग कर आ गया। रोता हुआ। ख़रीदने वालों को बुला कर पैसा वापस दे दिया। यह उस गाय और बैल का हमारे घर से मोह और नेह दोनों था। हमारा सौभाग्य भी।

गरमी की छुट्टियों में जब गांव जाता तो हमारे बाबा एक भैंस अकसर मुझे चराने के लिए दे देते। वह जब भैंसों में मिल जाती तो मैं पहचान नहीं पाता। कि कौन सी भैंस मेरी है। पर शाम को जब सभी भैंस घर वापस आतीं तो वह अपने आप घर आ जाती। या कभी-कभार छोटा भाई पहचान कर बताता। एक दोपहर मैं आम के बाग़ में सो गया। उठा तो कोई भैंस नहीं दिखी। शाम को घर आया यह सोच कर कि भैंस अपने आप आ जाएगी। पर नहीं आई। अब बाबा ने मेरी खूब ख़ातिरदारी की। दूसरी सुबह वह कनहौद गए। जुर्माना दे कर भैंस ले आए। किसी ने भैंस को कनहौद में बंद करवा दिया था।

पहले के समय कनहौद की व्यवस्था होती थी। अगर किसी के खेत में कोई गाय , भैंस चली जाए तो वह पहले तो संबंधित व्यक्ति से शिकायत करता। फिर भी नहीं मानता कोई तो वह चुपचाप कनहौद में बंद करवा देता था। लोग जुर्माना दे कर छुड़ा लेते थे। जुर्माना देना पड़े इस लिए ऐसी नौबत कम ही आती थी। अमूमन लोग मान जाते थे। पर अब लोग लालची हो गए हैं। इंजेक्शन लगा कर दूध निकालते हैं। प्यार नहीं करते गाय से। सम्मान और श्रद्धा भूल गए हैं , गाय के प्रति। भूल गए हैं कि गाय को हम गऊ माता भी क्यों कहते हैं। दूध नहीं देती है गाय तो पहले कसाई को बेच देते थे। अब अवैध बूचड़ खानों पर रोक लग गई है तो छुट्टा छोड़ दे रहे हैं। वृद्ध माता-पिता को भी उन के हाल पर छोड़ दे रहे हैं। फिर यह तो गऊ माता हैं।

पहले लोग गोवंश बढ़ाने के लिए सांड़ पालते थे। अब गर्भाधान भी इंजेक्शन से होता है तो सांड़ की ज़रुरत खत्म हो गई है। ट्रैक्टर और कंबाइन आ जाने से बैल की खेती खत्म हो गई है। तो छुट्टा छोड़ने लगे हैं लोग। कभी कोई भैंस या भैंसा क्यों नहीं छुट्टा मिलती। भैंस तो बेहिसाब खेत चरती है। चार-छ गाय मिल कर भी उतना खेत नहीं चार सकती , जितना एक भैंस चर जाती है। पर भैंस और भैंसे के लिए कसाई उपलब्ध है। न सिर्फ उपलब्ध है बल्कि दूध से ज्यादा पैसा भैंस के मांस से लोग कमा रहे हैं। भैंस और भैंसे की खाल और उस का मांस ही नहीं , उस की सींग , उस का खुर सब कुछ पैसा देता है। हड्डी और चर्बी भी। ज्यादातर घी और वनस्पति तेल भैंस या भैंसे की चर्बी और हड्डी से बन रहा है। इस लिए भैंस छुट्टा नहीं मिलती। दूध भी इसी लिए दिन-ब-दिन मंहगा हुआ जा रहा है। गांव की

अर्थव्यवस्था भी बदल चुकी है। गाय आधारित अर्थव्यवस्था कब की विदा हो चुकी है।

योगी सरकार ने ग़लती यह कि गोवंश की हत्या पर सख्ती तो कर दी , अवैध बूचड़खाने भी बंद करवा दिए पर बिसुकी हुई गाय और सांड़ फिर कहां जाएंगे , यह कभी नहीं सोचा। सोचना चाहिए था। अब सोच रहे हैं। बता रहे हैं कि प्रति गोवंश नौ सौ रुपया गो-पालक को देंगे। लेकिन लोग और सरकार भूल गए थे कि आदमी ही नहीं , गाय और सांड़ के पास भी पेट होता है। न यह बात सरकार ने सोची , न इन्हें छुट्टा छोड़ने वाले राक्षसों ने कभी सोची। गांव में एक कहावत सुनता था। हल द , बैल द , पिछाड़ी खोदे के पैना भी द ! तो यह कृतघ्न मनुष्य जिस गाय का दूध पी कर बड़ा हुआ , उसे छुट्टा छोड़ कर राक्षस बन चुका है। हर सुविधा इसे सरकार से ही चाहिए। मनुष्यता और गऊ प्रेम भूल चुका है। किसी कसाई से भी बड़ा कसाई बन चुका है हमारा समाज। हम सभी कसाई हैं।

आज के दिन जो भी लोग छुट्टा जानवरों की समस्या का गान गाते हैं , उन का साफ़ इशारा कसाइयों और बूचड़खाने की पैरवी करना ही होता है। वह चाहे रोज सपने में श्रीकृष्ण को देखने वाले अखिलेश यादव टाइप लोग हों या अन्य लोग। श्रीकृष्ण गो-सेवक भी थे , यह लोग भूल चुके हैं। गोपियां ही नहीं , गाएं भी श्रीकृष्ण की मुरली की दीवानी थीं। एक नहीं , अनेक प्रसंग और विवरण हैं इस बात के। सूरदास ने श्रीकृष्ण के बचपन का वर्णन करते हुए लिखा ही है :

मैया मोरी मैं नहिं माखन खायो,
भोर भयो गैयन के पाछे, मधुवन मोहिं पठायो ।
चार पहर बंसीबट भटक्यो, साँझ परे घर आयो ॥

गऊ माता और गऊ दान ही नहीं , जो-सेवा और गोधन की भी परंपरा है हमारे भारत में। गाय बची रहे , गोवंश बचा रहे , इसी लिए गाय को धर्म से जोड़ा गया। औषधि से जोड़ा गया। गाय एक समय समृद्धि का सूचक थी। किस राजा के पास कितनी गाय है , बड़ी शान से इस का बखान होता था। युद्ध में कोई राजा जब हारने लगता था , तब गाय आगे कर देता था। सेना रुक जाती थी। हार रहे राजा की जान बच जाती थी। ऐसे अनेक विवरण पढ़ने को मिलते हैं। गऊ हत्या को पाप से जोड़ा गया। गाय को पूंजी के रुप में देखा जाने लगा। सहस्र गायों का ज़िक्र अनेक कथाओं में आता है।

अश्वत्थामा , द्रोणाचार्य और ध्रुपद की कथा लोग भूल गए हैं। भूल गए हैं कि एक गाय न रहने की यातना , गाय का दूध न रहने पर पुत्र अश्वत्थामा को आटे का घोल पिलाने पर विवश होना पड़ा था आचार्य द्रोणाचार्य को। द्रोणाचार्य को इसी दूध की विपन्नता ने कौरवों की सत्ता से चिपकने के लिए विवश कर दिया था। मित्र ध्रुपद ने अगर एक गाय देने से मना न किया होता द्रोणाचार्य को तो शायद अर्जुन को धनुर्धर न बनाया होता द्रोणाचार्य ने। न द्रौपदी को जीत कर लाए होते अर्जुन। न द्रौपदी पर दुर्योधन अधिकार जताता। न द्रौपदी दुर्योधन पर तंज करतीं , न जुआ होता , न चीरहरण होता , न महाभारत हुआ होता। न कौरव वंश का नाश।

एक गाय की सत्ता ही इस सब के केंद्र में थी। यह लोग भूल गए हैं। पैसे की मारकाट और राजनीति के छल-कपट में हम यह सब भूल गए हैं। अफ़सोस ! यादव वोट बैंक बनाना हम सीख गए। पर यादव बनना भूल गए , यादव जी लोग। कसाइयों के साथ खड़े हो गए , यादव लोग भी। अफ़सोस ! कसाइयों

की जुबान और उन का हित हम ज़्यादा सीख गए। क्यों कि उस में पैसा बहुत है। गाय की श्रद्धा को , गऊ माता को हम अब मजाक बना बैठे हैं। गऊदान का महत्व ही था जो प्रेमचंद को गऊदान उपन्यास लिखना पड़ा। होरी के शोषण की कथा कहने के लिए गाय को केंद्र में लाना पड़ा। पर जाने क्या विवशता थी कि प्रेमचंद के उपन्यास गऊदान को उन के बेटे अमृत राय ने गोदान बना दिया।

पहले लोग बड़ी श्रद्धा से गाय पालते थे। अब सारी जान लगा कर कुत्ता पालते हैं। गाय का मजाक इतना बन चुका है कि अब वह हमारे लिए गाय नहीं , छुट्टा जानवर है। हम गो-सेवक नहीं , गो-हत्यारे हो गए हैं। गाय की हत्या करने वाले , गाय का मांस खाने वाले लोग अब कुछ लोगों के हीरो हैं और गाय छुट्टा जानवर। क्या सरकार ने छोड़ दिया है , छुट्टा जानवर ? फिर जाने क्या है , गाय के मांस में कि लोग जान पर खेल कर गाय का मांस खाने के लिए आतुर दीखते हैं। गंगा-जमुनी तहज़ीब की तुरही बजाने वाले लोग बहुसंख्यक लोगों की आस्था और भावना पर हमला कर देते हैं। गृह युद्ध का माहौल बना देते हैं। गाय का मांस खाना अपना अधिकार बताते हैं। जो इस गाय का मांस खाने से असहमति जताए , विरोध करे , वह सांप्रदायिक हो जाता है। दकियानूसी घोषित हो जाता है।

हमारी राजनीति , साहित्य और मनुष्यता का यह नया विमर्श है। यह वही गाय है जिसे कभी युद्ध में राजा लोग अपनी जान बचाने के लिए दुश्मन सेना के सामने कर देते थे और जान बच जाती थी। गाय के लिए इतनी श्रद्धा , इतना सम्मान कहां और कैसे तिरोहित हो गया। जनता और सरकार दोनों को विचार करना होगा। क्यों कि हम को तो आज भी याद है कि स्कूल के दिनों में इम्तहान में गाय पर निबंध लिखने को आता था। उस की पहली लाइन हम यही लिखते थे , गाय हमारी माता है। आप ने भी ज़रुर लिखा होगा। तब गाय का मांस खाना हमारा अधिकार नहीं था। न ही , हम गाय का मजाक उड़ाते थे। अब तो ख़ैर हम भारत माता का भी मजाक उड़ाते हैं। गाय के छुट्टा जानवर कहलाने की अंतर्कथा यही तो है। अब हमें जन्म देने वाली हमारी मां की बारी है। छुट्टा बनने की।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं व समसामयिक विषयों पर विचारोत्तेजक लेख किस्सागोई शैली में लिखते हैं)
साभार – https://sarokarnama.blogspot.com/2022/02/blog-post_23.html से